पुस्तकालय : प्रारम्भिक स्कूली शिक्षा का महत्त्वपूर्ण केन्द्रबिन्दु

दिनेश पटेल

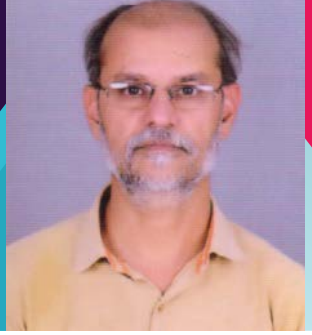

स्कूलों में बच्चों को सीखने के स्वतंत्र अवसर दिए जाएँ तो वे बेहतर सीखते हैं। वे अपने अनुभवों एवं तमाम तरह की रचनात्मक गतिविधियों के ज़रिए अपने आस-पास की दुनिया को जानने की प्रक्रिया का हिस्सा बनते हैं। वे हर उस चीज़ के साथ सम्पर्क स्थापित करना चाहते हैं जो उन्हें किसी भी रूप में आकर्षित करती हो। बशर्ते कि इस प्रक्रिया में किसी तरह का हस्तक्षेप शामिल न हो। चूँकि वे स्वभाव से जिज्ञासु प्रवृत्ति के होते हैं, वे हर उस चीज़ के बारे में जानना चाहते हैं जो उन्हें नई और अनोखी या अजीब लगती हो। कोई चीज़ *जैसी है वैसी क्यों है?* उसका रंग-रूप, आकार-प्रकार, उसका स्वभाव, उसकी प्रकृति आदि सब कुछ वे जल्दी जान लेना चाहते हैं। यह जिज्ञासा ही उन्हें सीखने/जानने की ओर अग्रसर करती है। समस्या तब होती है जब उनकी इस जिज्ञासु प्रवृत्ति को हम सायास या अनायास दरकिनार करने लगते हैं। इसका कारण कहीं यह तो नहीं कि बच्चों को क्या जानने की ज़रूरत है इस बारे में हमारे अपने पास स्पष्टता का अभाव है।

एक प्रोजेक्ट के तहत एकलव्य द्वारा मध्यप्रदेश के देवास, उज्जैन, होशंगाबाद, हरदा एवं बैतूल ज़िले के कुछ शासकीय स्कूलों में पुस्तकालय संचालित किए गए। एक क्रियाशील और रचनात्मक लाईब्रेरी चलाने का मेरा अपना अनुभव कहता है कि बच्चे इसके ज़रिए बहुत कुछ सीखते हैं। शायद यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि यहाँ बच्चे वह सब

राहुल अनिया, कक्षा छठवीं, बरखेड़ा, देवास

सीखते हैं जो एक अच्छा इन्सान बनने के लिए महत्त्वपूर्ण है। यह एक ऐसा अड्डा है जहाँ बच्चे एक-दूसरे की मदद करते हुए, एक-दूसरे से सीखते हैं। जहाँ अपनी मर्ज़ी से कुछ भी नया करने की उन्हें पूरी आज़ादी मिलती है। वे अपनी ज़िन्दगी की कहानियों को चर्चा में शामिल कर लेते हैं और किताबों में दर्ज कहानियों से प्रेरणा लेकर, अपने आस-पास के अनुभवों का भरपूर इस्तेमाल करते हुए नई-नई कहानियाँ गढ़ लेते हैं। फिर यह कहानियाँ तल्लीनता से भरपूर आनन्द के साथ एक-दूसरे को सुनाई जाती हैं। इन कहानियों को सुनने-सुनाने में जो मज़ा है उसकी आप कल्पना नहीं कर सकते हैं।

पुस्तकालय की यह एक ऐसी रोचक और मोहित करने वाली दुनिया होती है जहाँ बच्चे किताबों के साथ मज़बूत दोस्ती का रिश्ता बनाते हैं और पूरी आज़ादी से ज्ञान का सृजन करते हैं। यह प्रगाढ़ रिश्ता उन्हें पठन-पाठन, विभिन्न तरीक़ों की चित्रकारी, नाटक, माथापच्ची, खेल, क्राफ्ट एवं अन्य गतिविधियों में विभिन्न क्षमताओं को विकसित करने में अहम भूमिका निभाता है। इस पुस्तकालय प्रोजेक्ट में किताबों का लेन-देन एवं उनका रख-रखाव आदि तमाम तरह की गतिविधियाँ बच्चे ख़ुद करते हैं। हालाँकि इसमें बड़े वालंटियर एवं शिक्षक मददगार के रूप में शामिल रहते हैं।

स्कूल में बच्चों के साथ पुस्तकालय पर काम के दरमियान कई दिलचस्प चीज़ें सामने आईं। छात्र-छात्राओं ने दीवार अख़बार के ज़रिए की जाने वाली लेखन गतिविधि से कई दिलचस्प अनुभव प्राप्त किए। बच्चों द्वारा लिखित यह अनुभव-रचनाएँ उनके सृजनात्मक पहलू का एक जीवन्त उदाहरण हैं। बहुत ज़रूरी है कि भाषायी कौशल को बढ़ाने हेतु पढ़ने-लिखने की गतिविधियों के अधिक अवसर उपलब्ध कराए जाएँ ताकि बच्चे खुलकर अपनी बात कह सकें और अपनी जिज्ञासाओं को शान्त करने के रास्तों की तलाश की ओर अग्रसर हो पाएँ। हमारा मानना है कि शिक्षा का असली मक़सद होना चाहिए कि बच्चे शिक्षक की मदद से, कक्षा में और उससे बाहर अपने परिवेश से सीखने की प्रक्रिया का हिस्सा बन सकें।

इस बात पर प्रमुखता से ज़ोर दिए जाने की ज़रूरत है कि शिक्षक बच्चों की ज्ञान–निर्माण प्रक्रिया को किस तरह से सक्रिय एवं रचनात्मक बना सकता है। जैसा कि एनसीएफ़ 2005 ने भी सुझाया है कि, "...स्कूल पुस्तकालय की संकल्पना एक

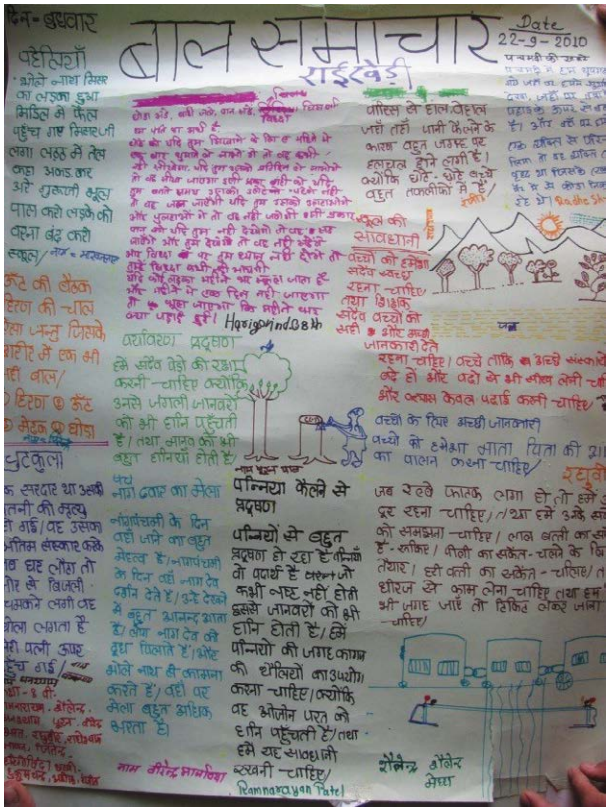

बच्चों द्वारा बनाया गया दीवार अख़बार

ऐसे बौद्धिक स्थल के रूप में की जानी चाहिए जहाँ शिक्षक, विद्यार्थी और निकटस्थ समुदाय के लोग ज्ञान के गहरे अर्थों और कल्पनाशीलता की तलाश में आएँ...।''

यह बात इसलिए भी मानीखेज़ है कि शिक्षा के क्षेत्र में देश-दुनिया में नए शोधों के ज़रिए भी यह बात ज़ोर देकर कही जा रही है कि बच्चे अपने ज्ञान के निर्माण में ख़ुद बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उनके अपने अनुभवों को दरकिनार करके बहुत कुछ सिखाया नहीं जा सकता। ज़रूरी है कि बच्चों की समझ के हिसाब से, पढ़ाई के साथ उनका रिश्ता बन पाए ऐसी कोशिशें की जाएँ, जो कुछ हद तक पाठ्यक्रम से और बहुत हद तक आस-पास की दुनिया से पूरी होती हैं।

पुस्तकालय का प्रमुख मक़सद है बच्चों का उत्कृष्ट साहित्य से परिचय कराना और बच्चों में पढ़ने-लिखने के प्रति रुचि पैदा करना ताकि भाषा पर उनकी पकड़ अच्छी हो सके और वे स्वयं अपने ज्ञान के सृजन में भागीदार बन सकें। इसके लिए ज़रूरी है कि स्कूल का माहौल ऐसा हो जिसमें विभिन्न रचनात्मक गतिविधियों के ज़रिए उनमें पढ़ाई के प्रति रुझान उत्पन्न हो तथा नेतृत्व-क्षमता का विकास हो सके।

पुस्तकालय का एक अन्य उद्देश्य है, बच्चे दुनिया को जिस नज़र से देखना चाहते हैं उसमें उनकी मदद करना। इसमें प्रमुख रूप से पठन एवं लेखन सम्बन्धी गतिविधियों पर हमारा

अमित साहू, कक्षा सातवीं

शासकीय स्कूलों में पुस्तकालय-संचालन के *एकलव्य* के अनुभव से हमने सीखा कि बच्चे पुस्तकालय के ज़रिए कितना कुछ सीख सकते हैं। देखें बच्चों के विचार, उनके ही शब्दों में –

जसपाल, कक्षा 7, गयासुर गाँव : "एकलव्य की लाइब्रेरी की किताबों से ही मैंने पढ़ना सीखा। कॉपी (किताब) ले लेता और छुपाकर पढ़ता था कि कोई देख न ले। फिर धीरे-धीरे पढ़ना सीख गया। इससे पहले मेरे को कुछ भी पढ़ना नहीं आता था।"

कुछ ऐसी ही कहानी डापका, पिपरिया के स्कूल की है। गोविंद, रामकुमार, जसमन, राकेश एवं ब्रजमोहन। इन पाँचों बच्चों ने बताया, " पहले हम हिचक-हिचक के पढ़ते थे। पढ़ने में खूब देर लगती थी। हिज्जे कर-करके पढ़ना पड़ता था। फिर कुछ दिन के बाद धीरे-धीरे पढ़ना सीख गए। पुस्तकालय की किताबों की कहानियाँ पढ़ने से पढ़ने की आदत हो गई। फिर धीरे-धीरे सोचकर लिखना भी सीखे। चित्र बनाना भी किताबों से ही सीखा।"

रामकुमार, डबका : "जब लाइब्रेरी की किताबें नहीं मिलती थीं तो पढ़ने में शर्म आती थी। अब मैं कक्षा में खुले दम से किताब पढ़ लेता हूँ।" रामकुमार ने दो-ढाई महीने में पढ़ना सीख लिया था और अब वह स्कूल की पाठ्यपुस्तक भी ठीक से पढ़ लेता है। उसके शब्दों में - " अब तो सारी चीज़ समझ में आती है।"

जगदीश प्रजापति, बोरखेड़ा : " मुझे पहले कम पढ़ना आता था पर अब पुस्तकालय की किताबें धीरे-धीरे पढ़ने लगा हूँ। कहानियाँ ज़्यादा पढ़ीं और जानकारी वाली किताबें भी पढ़ीं।"

फोकस अधिक था ताकि बच्चे किताबों के इस्तेमाल से अपनी भाषायी क्षमता (लिखित व मौखिक) को समृद्ध बना पाएँ तथा स्कूलों में संचालित पुस्तकालय, उक्त तमाम रचनात्मक गतिविधियों के केन्द्र बन पाएँ।

इस तरह के उदाहरणों से लगता है कि बच्चे किताबों की दुनिया में धीरे-धीरे ही सही लेकिन हमेशा के लिए जुड़ने लगते हैं। जिस तरह से उन्होंने कई किताबों के नाम गिनाए इससे ज़ाहिर था कि वे उन्हें बेहद पसन्द आई होंगी। इन किताबों के नियमित इस्तेमाल से उनके पढ़ने की आदत में एक नियमितता आई है।

उनकी जिज्ञासा का पोषण हो रहा है इसका अन्दाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता था कि वे अपेक्षाकृत ज़्यादा ख़ुशमिजाज़ और उत्साह से लबरेज़ हैं। पहले से अधिक सहजता और अपनेपन से वे हमसे संवाद करते हैं। ऐसा नहीं लग रहा था कि वे किसी शिक्षक से बात कर रहे हैं बल्कि किसी दोस्त से बातचीत कर रहे हैं ऐसा महसूस हो रहा था। जैसा कि कुछ बच्चों ने कहा भी कि, ''सर आप हमारी बात सुनते हो और हम मस्ती करते हैं तो डाँटते भी नहीं हो और बहुत सारी चीज़ें सिखाते हो, तो हमको बहुत अच्छा लगता है।"

पुस्तकालय के इस्तेमाल का एक महत्त्वपूर्ण परिणाम यह हुआ कि बच्चे लिखने की प्रक्रिया की तरफ़ धीरे-धीरे ही सही लेकिन आगे बढ़ने लगे हैं। वे यह समझ पाने की तरफ़ क़दम बढ़ा पाए कि कुछ लिखना व चित्र बनाना सचमुच काफ़ी दिलचस्प और रोचकता से भरपूर होता है। इन बच्चों में एक अलग ही उमंग

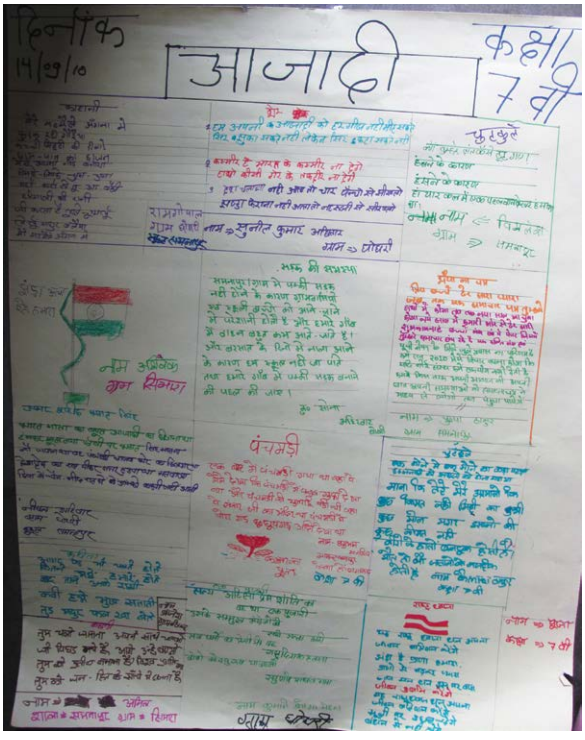

सोना अहिरवार, कक्षा छठवीं

और उत्साह है। वे कहीं अधिक आत्मविश्वासी भी हो गए हैं। इसकी प्रमुख वज़ह शायद यह रही कि जब हम बच्चों से उनके अनुभव लिखवाने की कोशिश कर रहे थे तब हमने उनके द्वारा रचित भिन्न-भिन्न प्रकार की प्रारम्भिक रचनाओं को उसी रूप में स्वीकार किया। उनमें किसी तरह की मीनमेख नहीं निकाली बल्कि उनके रचे हुए की प्रशंसा ही की और उन्हें शाबासी भी दी। इसीलिए यह बच्चे हमेशा कुछ-न-कुछ रचनात्मक कर गुज़रने के उत्साह से लबरेज़ रहे। उन्हें जब भी और जो कुछ भी करने या रचने का मन होता तो वे उसे कर सकते थे। यदि मन नहीं करता तो न करने की भी पूरी आज़ादी थी। इस तरह के माहौल की गुंजाइश हमारी स्कूली व्यवस्था में बहुत कम ही देखने को मिलती है। लेकिन मेहनत और लगन से किए गए रचनात्मक प्रयासों से इन सरकारी विद्यालयों में भी काफ़ी कुछ रचनात्मक किए जाने की सम्भावनाओं के द्वार खुलते हैं। यही अनुभव मुझे इन सरकारी स्कूलों में काम करते समय मिला।

देवास के पोनासा गाँव के मिडिल स्कूल की शिक्षिका श्रीमती बबीता जायसवाल ने बताया कि, '' बच्चों ने आपकी किताबें खूब पढ़ी हैं। मैं जब भी अकेली रहती तो उन्हें होमवर्क करने के बाद पुस्तकालय की किताबें दे देती। इससे उनमें पढ़ने के प्रति काफ़ी रुचि बढ़ी है। कई बच्चों ने तो अधिकांश किताबें पढ़ ली हैं। इसलिए उनका कहना है कि उन्हें और किताबें चाहिए।''

गयासुर व बोलासा (देवास), सेमलिया नासर व मुंजाखेड़ी (उज्जैन), डबका (होशंगाबाद) तथा शाहपुर, सिलपटी एवं भुन्नास (बैतूल) के स्कूलों के बच्चों ने बताया कि उनके शिक्षक भी पुस्तकालय की किताबें पढ़ते हैं और घर भी ले जाते हैं। कुल 38 बच्चों में से 13 बच्चों ने बताया कि उनके घर में उनके भाई-बहन एवं परिवार के अन्य सदस्य भी यह किताबें पढ़ते हैं। उज्जैन क्षेत्र के तीनों गाँवों के बच्चों ने बताया कि हमारे शिक्षक ख़ुद किताबें पढ़कर उनसे खेल खिलाते हैं और चीज़ें भी बनवाते हैं।

इन बच्चों ने पूछने पर यह भी बताया कि, "किताबें नहीं मिलतीं तो जल्दी पढ़ना नहीं सीखते; खिलौने बनाने को नहीं मिलते; पढ़ना और लिखना नहीं आता; अच्छी कहानियाँ पढ़ने को नहीं मिलतीं; डायलॉग नहीं सीखते, पहेलियाँ नहीं सीख पाते; कहानियाँ सीखीं, पढ़ना व बोलना सीखा; मन से सीखा तो मज़ा आता है, सरलता से कहानी भी याद हो जाती है; जंगल में जाते-जाते कहानी का गाना भी बनाते हैं; नए-नए चित्र बनाना भी सीखा, खेल भी सीखे; अच्छे-बुरे की बात सिखाती है कहानी, ''गुड्डी'' कहानी से सीखा कि नदी-तालाब में नहाना नहीं चाहिए और कपड़े धोने का काम नहीं करना चाहिए। इससे पानी गन्दा होता है; दीवार अख़बार से जल्दी लिखने की हमारी आदत बन गई।"

एक अन्य बच्चे का अनुरोध था कि, "अच्छी किताबें और लेकर आना क्योंकि पापा कभी-कभी किताबें पढ़कर देखते हैं।" जसपाल ने कहा कि उसने अपने भाई को बताया कि साँप के डसने का भी इलाज होता है। इसकी किताब है स्कूल की लाइब्रेरी में, उसमें बताया है कि कैसे साँप के काटे का इलाज होता है, तो भाई बोला कि "मेरे को ला देना वो किताब मैं उसमें से पढ़ूँगा।"

बच्चों के इन अनुभवों में एक प्रकार की विविधता देखने को मिलती है। वे पुस्तकालय की विविधतापूर्ण किताबों से सक्रिय रूप से रिश्ता बना पाने की तरफ़ बढ़ रहे हैं। इससे उनके अपने शब्दकोश में काफ़ी इज़ाफ़ा हुआ है। यह सब उनकी बातचीत में स्पष्ट झलकता है। वे यह समझने लगे हैं कि अगर कोई उन्हें न भी सिखाए तो कई चीज़ें वे स्वयं भी किताबों की मदद से सीख सकते हैं। जब वे कोई चीज़ किताबों के ज़रिए सीखते हैं, तो उस समय उनकी ख़ुशी का कोई ठिकाना नहीं रहता। यह सब वे हमें तो बताते ही हैं, अपने स्कूल के शिक्षकों को भी उतने ही उत्साह से बताते हैं।

पढ़ने के लिए किताब कैसे पसन्द करते हो? इस सवाल के जवाब में अधिकांश बच्चों ने बताया कि वे पहले किताब का नाम देखते हैं, पसन्द नहीं आता तो थोड़े पन्ने पलटकर देखते हैं, अच्छी लगे तो पढ़ते हैं नहीं तो रख देते हैं। कई बार वे चित्र देखकर भी किताब पसन्द करते हैं। ज़ाहिर है कि किताब का कथानक, उसके चित्र, भाषा, डिज़ाइन, लेआउट, आदि की किताब-चयन में महत्त्वपूर्ण भूमिका है। बच्चे रंगीन चित्रों वाली किताबें ज़्यादा चुनते हैं।

पुस्तकालय की नियमित गतिविधियों एवं बच्चों के साथ हमारे व्यवहार और कक्षा में शिक्षण के तौर-तरीक़ों को देखते हुए, कुछ शिक्षक साथियों के, बच्चों के साथ व्यवहार में सकारात्मक तब्दीली देखने में आई है। शिक्षक उन्हें स्कूल की सरकारी किताबें भी अब ख़ुद पढ़ने के लिए देने लगे हैं। ऐसा पहले नहीं था। वे पाठ्यपुस्तकों से इतर अन्य साहित्य को लेकर थोड़ी उत्सुकता दिखाने लगे हैं। जब वे पाठ्यपुस्तक का कोई पाठ बच्चों को पढ़ा रहे होते हैं, तो वे पढ़ाते समय बच्चों के अपने अनुभवों को भी इसमें शामिल कर रहे होते हैं। यानी बच्चों की सक्रिय सहभागिता से कक्षा-संचालन करना।

शिक्षक बाल-केन्द्रित शिक्षा के सिद्धान्त को समझने की तरफ़ भी बढ़ रहे हैं जिससे कक्षा को कहीं बेहतर ढंग से संचालित किया जा सकता है। इससे वे इस समझ की ओर बढ़ रहे होते हैं कि प्रत्येक बच्चे की समझ का स्तर और समझने के तरीक़ों में फ़र्क़ होता है। क्या यह विचारों में महत्त्वपूर्ण बदलाव का संकेत नहीं है? एनसीएफ़ 2005 भी इसका समर्थन *करता है- शिक्षक को एक मार्गदर्शक की भूमिका में होना चाहिए न कि ज्ञानदाता के रूप में, तभी वह बेहतर शिक्षक साबित हो सकता है।*

दिनेश पटेल वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फ़ाउंडेशन में, भाषा के रिसोर्स पर्सन के रूप में कार्यरत हैं। इससे पूर्व उन्होंने 30 वर्षों तक शिक्षा के क्षेत्र में *एकलव्य*, मध्यप्रदेश के साथ काम किया है। वे हिन्दी साहित्य, शिक्षा एवं साहित्य सम्बन्धी विषयों में लेख लिखने और रेखांकन में रुचि रखते हैं। उनसे *dineshpatel3@gmail.com* पर सम्पर्क किया जा सकता है।